मार्जरी साइक्स

शिक्षा–सादगी, सौंदर्य और समानता के लिए

अनिल सेठी*

मार्जरी साइक्स (1905–1995) ने कई वर्षों तक महात्मा गाँधी और रविंद्र नाथ ठाकुर के साथ एक अध्यापिका की हैसियत से काम किया। उन्होंने इन दोनों के शिक्षा संबंधी विचारों का सफलतापूर्वक समावेश किया। साइक्स जन्म से ब्रिटिश थीं। 1928 ई. में वे भारत आई, 1990 के दशक तक यहाँ रहीं और उन्होंने सेवाग्राम और शांति निकेतन समेत कई जगहों पर पढ़ाया। अपने मार्गदर्शकों की तरह साइक्स 'स्कूली पढ़ाई' और 'शिक्षा' में स्पष्ट अंतर करती थीं। वे यह भी मानती थीं कि किसी भी बुद्धिमान अध्यापक को यह जानना चाहिए कि कब बच्चों को अपनी मनमानी करने के लिए अलग छोड़ दिया जाए और कब अध्यापक पीछे हट जाए ताकि उनकी गतिविधि में दखल दिए बिना उन्हें समझ सके। साइक्स के शैक्षिक विचार, चिंतन और काम की कई धाराओं से निकले पर अंततः उनकी चेष्टा थी—सादगी, सौंदर्य और समानता की ओर ले जाने वाली शिक्षा का प्रवर्तन।

मार्जरी साइक्स (1905–1995) उन विदेशियों में से थीं जिन्होंने भारतीयता को अपनाना तय किया था क्योंकि भारत उन्हें असाधारण रूप से लुभाता था। इस सम्मोहन का अनुभव उन्हें पहले-पहल हमारे स्वतंत्रता संग्राम के कुछ शिखर व्यक्तित्वों के जीवन और कृतित्व के माध्यम से हुआ। साइक्स जन्म से ब्रिटिश थीं। वे चैन्नई के बेंटिक गर्ल्स हाई स्कूल में पढ़ाने के लिए 1928 के शरद में भारत आई। 1990 के दशक तक वे यहीं रहीं और इस दौरान वे गाँधीजी, रवींद्रनाथ ठाकुर और सी.एफ. ऐण्ड्रयूज जैसे व्यक्तित्वों तथा विभिन्न ईसाई परंपराओं—

**प्रोफ़ेसर-इतिहास*, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और पशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली

विशेषकर क्वेकर[1] परंपरा से प्रेरित अनेक तरह के विचारों, गतिविधियों और परियोजनाओं में लीन रहीं। वृद्धावस्था में भी साइक्स सक्रिय और प्रभावी थीं। उन्होंने अपने जीवन का चित्रांकन एक विराट फलक पर किया। आध्यात्मिकता, सादगी, प्रकृति से जुड़ाव, पैदल सैर, पर्वतारोहण, दस्तकारी, भाषाएँ, नाटक, दर्शनशास्त्र, लेखन, ग्राम सुधार, शांति आंदोलन, राजनय तथा समझौता वार्ता, क्वेकर गतिविधियाँ, अपने मार्गदर्शकों के विचार... दिन रात वे इन्हीं सब में रमी रहती थीं। इन सभी से वे कुछ न कुछ सीखने और लोगों को भी इनके बारे में जानकारी देने की कोशिश करती थीं। इसलिए उनके शिक्षा संबंधी विचारों ने इनमें से अनेक अभिरुचियों से बहुत कुछ ग्रहण किया है, पर अंततः उनकी चेष्टा थी—सादगी, सौंदर्य और समानता की ओर ले जाने वाली शिक्षा का प्रवर्तन।

उनका जन्म यार्कशायर के एक कम साधन संपन्न परिवार में हुआ था। उनके पिता कोयला खानों के इलाके के गरीब देहाती स्कूलों में हेड मास्टरी करते थे। मार्जरी तथा उनके दो भाई-बहनों का पालन-पोषण अपेक्षाकृत गरीबी की स्थिति में हुआ था मगर साथ ही उन्हें मितव्ययिता, स्वच्छता और धर्मपरायणता के संस्कार भी मिले थे। उनकी स्कूली शिक्षा हडर्स फ़ील्ड इलाके के स्थानीय स्कूलों में हुई थी पर कॉलेज स्तर पर अँग्रेज़ी के अध्ययन के लिए उन्हें छात्रवृत्ति मिली और वे केम्ब्रिज के न्यून्हम कॉलेज में दाखिला ले सकीं। कॉलेज की पढ़ाई के दौरान वे अक्सर अपने पिता के साथ उनकी परियोजनाओं पर काम किया करती थीं। उनके पिता मशीनों के व्यावहारिक मॉडलों के डिज़ाइन बनाने की कोशिश करते थे जो इतने आसान हों कि स्कूलों के बच्चे उन्हें खुद बना और चला सकें और जिनके ज़रिए वे दैनिक जीवन में काम आने वाली मशीनों के बारे में भी जानकारी हासिल कर सकें। वे बच्चों के लिए विनोद भाव, सुंदरता या रहस्य भाव के आधार पर चुनी हुई कविताओं की पुस्तिकाएँ निकाला करते थे। वे इतिहास का पुनर्कथन इस तरीके से करते थे जो पाठकों की मानवीय सहानुभूति को जाग्रत करे। इन सब कामों में वे मार्जरी को भी शामिल करते थे जो बड़े उत्साह से हाथ से बनी किताबों की सिलाई किया करती थीं। उन्हें यह काम कभी नीरस बोझ-सा नहीं लगा[2]। साइक्स ने केंब्रिज में अँग्रेज़ी का ट्राइपॉस (ऑनर्स डिग्री) प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण किया। इसके लिए उन्होंने विलियम ब्लेक पर एक लघु शोध प्रबंध लिखा था। वे आसानी से अँग्रेज़ी विषय में अपनी उच्चतर शिक्षा जारी रख

[1] क्वेकर-यह मत ईसाई धर्म में से उभरा एक आंदोलन है जिसमें शांति के सिद्धांतों पर बल रहता है। क्वेकर लोग औपचारिक सिद्धांतों, धर्म संस्कारों तथा दीक्षित पादरियों की परंपरा का पालन नहीं करते और उनकी आस्था स्वानुभव की आंतरिक सत्ता में होती है। क्वेकर लोग आध्यात्मिक समानता पर बल देते थे, इसलिए सामाजिक न्याय के प्रति वे संवेदनशील होते थे। भारत की राष्ट्रीय भावना के प्रति उन्हें सहानुभूति थी और उनमें अनेक जन महात्मा गाँधी के विश्वस्त मित्र थे। साइक्स इस आंदोलन तथा भारत में इसके कार्यों से इतनी प्रभावित थीं कि उन्होंने इन पर एक किताब भी लिखी-*क्वेकर्स इन इंडिया : अ फॉरगॉटन सेंचुरी* (लंदन 1980)।

[2] साइक्स के जीवन और कृतित्व के बारे में ब्यौरे या तो स्वयं उनके लेखन से लिए गए हैं, या मार्था डार्ट की *मार्जरी साइक्स-क्वेकर गाँधियन* (लंदन, तिथि अज्ञात) से। डार्ट की पुस्तक ही शायद मार्जरी साइक्स की एकमात्र जीवनी है। मैंने इसके इलेक्ट्रॉनिक संस्करण का इस्तेमाल किया है। www.arvindguptatoys.com पर 'बुक्स ऑन एजुकेशन' लिंक के ज़रिए यह पुस्तक उपलब्ध है। अरविंद गुप्ता प्रसिद्ध विज्ञान शिक्षाविद हैं। वे बच्चों के लिए शैक्षिक खिलौने भी बनाते हैं।

सकती थीं, लेकिन अपने पिता के कार्यों के प्रति आकर्षण के कारण उन्होंने स्कूलों में अध्यापन को चुना। उन्होंने अध्यापन का प्रशिक्षण लेते हुए केंब्रिज में एक वर्ष और बिताया जिसके समापन पर उन्होंने अफ़्रीका और एशिया में शिक्षण के अवसरों की तलाश शुरु की। जब उन्हें मद्रास में लंदन मिशनरी सोसाइटी द्वारा संचालित बेंटिक हाई स्कूल में काम करने का प्रस्ताव मिला तो उन्होंने सहर्ष उसे स्वीकार कर लिया।

बेंटिक स्कूल में साइक्स को अपने पालन-पोषण के तरीके और पूर्व प्रशिक्षण का अच्छा लाभ मिला। अपने माता-पिता को देखकर वे समझ चुकी थीं कि बच्चों को अन्वेषण और उपलब्धि से, मौज-मस्ती और साहसिक कार्यों से, कल्पना और करुणा से किस प्रकार उत्साहपूर्ण प्रेरणा मिलती है। उनके पिता कभी भी व्यक्तियों, सामाजिक समूहों और राष्ट्रों को किसी रूढ़िवादी रूपरेखा में रखकर नहीं देखते-दिखाते थे। उन्होंने बेटी को यह भी सिखाया था कि 'अपना कर्तव्य निजी आकांक्षाओं से प्रभावित हुए बिना निभाना चाहिए. केवल एक ही बात मायने रखती है... नि:स्वार्थी होकर सीखना[3]। आगे चलकर भारत में मार्जरी को 'निष्काम कर्म' की अवधारणा के रूप में इस बारे में और सीखना था। इसके अतिरिक्त केंब्रिज में उनके अध्यापकों ने उन्हें अंतर्राष्ट्रीय शांति और सामाजिक न्याय के क्षेत्र में किसी न किसी रूप में योगदान करने की प्रेरणा दी थी। उनमें से बहुत से लोग इसे ईसा मसीह का संदेश मानते थे जिसे युवा दिमागों तक पहुँचाना था, और वह ऐसी शिक्षा के ज़रिए जो उन्हें 'विश्व के स्तर पर सोचना लेकिन स्थानीय स्तर पर काम करना' सिखाए। जो भी हो, नौ वर्ष की कच्ची उम्र में भी मार्जरी को युद्ध से नफ़रत थी। यह बात उन्हें हमेशा-हमेशा याद रहती थी कि जब प्रथम विश्वयुद्ध शुरु हुआ तो किस प्रकार 'माहौल में महाविनाश का गहन आभास छाया रहता था', और यह कि युद्धजनित वैर ने कैसे एक प्रिय जर्मन शिक्षिका को अचानक ही 'विदेशी शत्रु' में बदल दिया था।[4] सन् 1928 में बेंटिक एक अपेक्षाकृत छोटा स्कूल (किंडरगार्टन से अंतिम कक्षा तक जिसमें 350 से भी कम बच्चे थे) और घनिष्ठ रिश्तों में बँधा समूह था। इसमें एक छात्रावास भी था हालाँकि सारे छात्र इसमें नहीं रहते थे। सभी अध्यापक और छात्र एक दूसरे को पहचानते थे 'और एक बड़े परिवार की तरह एक दूसरे का ख्याल रखते थे'। चेन्नई की जलवायु को देखते हुए स्कूल में कम-से-कम. फर्नीचर रखा जाता था और इसके सदस्य कभी-कभार ही चप्पल पहनते थे। वे नंगे पैर चलते-फिरते और फ़र्श पर बिछी चटाइयों पर सोते थे। छात्रावास में हर बच्चे के कपड़े और निजी वस्तुएँ एक छोटे से बक्स में ही समा जाती थीं। अलग-अलग धर्म और जातियों के बच्चों को बराबरी के दर्जे पर दाखिला दिया जाता था और छात्रावास के संवासियों की जाति कुछ भी हो, वे सभी एक ही रसोई में बना हुआ एक ही खाना खाते थे। ऐसा भी होता ही रहता था कि ब्राह्मण छात्र 'नीची जात' के लोगों की जूठी पतलें उठाते थे या उनके जूठे बर्तन माँजते थे।

[3] मार्था डार्ट, मार्जरी साइक्स, क्वेकर गाँधियन, पृ.8

[4] वही, पृ. 9

प्रिंसिपल की हैसियत से मार्जरी साइक्स ने प्रतियोगिताओं और पुरस्कारों तथा 'उनसे भड़कने वाली स्व-केंद्रित प्रतिद्वंद्विता'[5] पर रोक लगा दी। उन्होंने सहयोग के मूल्यों पर बल दिया और इस तरह की व्यवस्था स्थापित की जिसमें तेज़ छात्रों को पढ़ाई में मंदबुद्धि छात्रों की मदद करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता था—'वयस्कों की तुलना में वे इसे कहीं अधिक प्रभावी ढंग से करते थे।'[6] शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों की योजना कुछ एक सितारों को श्रेष्ठ प्रदर्शन करके पुरस्कार जीतने की खातिर प्रशिक्षित करने के लिए नहीं 'बल्कि हर बच्चे के स्वास्थ्य तथा कौशल में सुधार लाने के लिए'[7] बनाई जाती थी।

बेंटिक तथा साइक्स 'पाठ्य विषय' तथा 'पाठ्येत्तर गतिविधियों में कोई अंतर नहीं करते थे, जो अंतर बहुत-से भारतीय स्कूल हमेशा से रखते आए हैं। (सन् 2005 के राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के ढाँचे का उद्देश्य इस अंतर को समाप्त करना है।) उदाहरण के लिए उस स्कूल में अँग्रेज़ी और संगीत साथ-साथ पढ़ाए जाते थे। झाड़ू लगाना, इमारत की सफ़ाई, बागबानी आदि का उतना ही महत्त्व था जितना लिखना, पढ़ना, गणित आदि सीखने का। सफ़ाई, बागबानी आदि को शिक्षा की केंद्रीय चिंता माना जाता था। यह बात साइक्स ने जितनी स्वयं अपनी शिक्षा-दीक्षा से सीखी थी, उतनी ही गाँधी तथा रवींद्रनाथ ठाकुर से। इस सोच को केवल बेंटिक ही नहीं बल्कि हर उस जगह लागू किया गया जहाँ-जहाँ उन्होंने पढ़ाया था। गाँधीजी ने 1937 में जब अपने शिक्षा संबंधी कार्यक्रम की प्रथम सार्वजनिक घोषणा की थी, तब इसी सोच के कारण उसे लेकर मार्जरी इतनी उत्साहित हो उठी थीं। गाँधीजी की नयी तालीम के रूप में समर्पित और कार्यान्वित इन विचारों का अन्यत्र विस्तृत विश्लेषण किया गया है।[8] यहाँ इतना ही कह देना काफ़ी है कि गाँधीजी शिक्षा कार्य में दैनिक जीवन तथा कार्यों के संसाधनों के इस्तेमाल के आग्रही थे। शिक्षा का लक्ष्य जीवन को समझना और जिस रूप में वह सामने आए, उसी रूप में उसका सामना करना है। लेकिन शिक्षाभ्यास को भी स्वयं जीवन के अंदर से होकर ही संरचित भी किया जाना था। इस गाँधीवादी प्रतिमान का आशय था कि शिक्षार्थी स्वयं अपने अस्तित्व की स्थितियों और अपने समाज से सक्रिय रूप से जुड़ा रहे ताकि वह अतिश्रम और शोषण से अपनी मुक्ति की राह तलाश सके। जैसाकि गाँधीजी ज़ोर देकर कहते थे, 'शिक्षा ही सच्ची आज़ादी देती है'[9] लेकिन यह तभी संभव है जब यह 'बच्चों या बड़ों के

[5] जहाँगीर पी. पटेल तथा मार्जरी साइक्स, *गाँधी : हिज़ गिफ्ट ऑफ़ द फ़ाइट* (गोवा 1987) पृ. 43

[6] वही

[7] वही, पृ. 44

[8] उदाहरण के लिए दे. मार्जरी साइक्स, द *स्टोरी ऑफ नई तालीम–फिफ्टी इयर्स ऑफ़ एजुकेशन एट सेवाग्राम; 1937–1987* (सेवाग्राम, 1987); कृष्ण कुमार, 'लिसनिंग टु गाँधी'- रजनी कुमार, अनिल सेठी और शालिनी सिक्का (संपादक), *स्कूल, सोसाइटी, नेशन –पॉपुलर एसेज इन एजुकेशन* (दिल्ली, 2005) में संकलित; जी. रामानाथन, एजुकेशन फ्रॉम ड्यूई टु गाँधी–द *थ्योरी ऑफ़ बेसिक एजुकेशन* (मुंबई, 1962); सीतारमैया, *बेसिक एजुकेशन–द नीड ऑफ़ टुडे* (वर्धा, 1952); और अनिल सेठी, 'एजुकेशन फॉर लाइफ़, थ्रू लाइफ़–अ गाँधियन पैराडाइम', क्रिस्टोफ़र विंच के *फर्स्ट महात्मा गाँधी मेमोरियल लेक्चर* (नयी दिल्ली 2007) में।

[9] जे.डी. सेठी द्वारा *गाँधी टुडे* (दिल्ली 1978) में प्रकाशित लेख 'अ गाँधियन क्रिटिक ऑफ़ मॉडर्न इंडियन एजुकेशन इन रिलेशन टु इकॉनॉमिक डेवलपमेंट' में उद्धृत, पृ. 126

देह, मन और आत्मा में जो भी सर्वश्रेष्ठ है उसे समग्र रूप से बाहर ला सके'**[10]**। 31 जुलाई 1937 के *हरिजन* में गाँधीजी ने इस विषय में जो एक छोटा-सा अनुच्छेद प्रकाशित किया था उसने साइक्स को अंदर तक झकझोर दिया–'उन गिने-चुने वाक्यों ने मेरे दिमाग से बाकी सब कुछ निकाल फेंका। मैं उद्दीप्त हो उठी। मैं उन्हें बार-बार पढ़ती रही और मुझे अब भी स्पष्ट रूप से शब्दश: याद है कि मेरे दिमाग में कौन-सी बात आई थी–''आखिर अब ऐसा कोई है जो शिक्षा के बारे में सचमुच समझदारी से कुछ कह रहा है।'' मैं उत्सुकता से *हरिजन* के आगामी अँकों की प्रतीक्षा करने लगी और गाँधीजी के प्रस्ताव से जो विवाद उठे थे उनका अध्ययन करती रही।'**[11]** सन् 1939 में रवींद्रनाथ ठाकुर ने मार्जरी साइक्स को 'अँग्रेज़ी संस्कृति की प्रतिनिधि'**[12]** के रूप में शांति निकेतन में पढ़ाने को बुलाया। यह एक दुर्लभ अवसर था। इससे साइक्स को न केवल रवींद्रनाथ के शिक्षा तथा सामुदायिक सहजीवन के प्रयोगों को निकट से देखने का अवसर मिला, बल्कि वे इस बात का भी अध्ययन कर सकीं कि गाँधीवादी पद्धति से उसका कहाँ मेल है। रवींद्रनाथ तथा गाँधी के बीच अनेक संपर्क सूत्र थे और गाँव और शांति निकेतन के बीच आवागमन बना रहता था। साइक्स को तमिल तथा हिंदी का तो अच्छा ज्ञान था ही, अब उन्होंने शीघ्र ही बांग्ला भी सीख ली और बड़ी सहजता से शांति निकेतन के सांस्कृतिक तथा बौद्धिक जीवन में शामिल हो गईं जिसमें थे—फूल और भित्तिचित्र, वस्त्र बुनाई और काष्ठशिल्प, कविता और संगीत, नृत्य और नाटक तथा धार्मिक संवाद की स्वतंत्रता। छात्राओं तथा ईसाई विद्यार्थियों के लिए उनका घर विशेष आकर्षण का केंद्र सिद्ध हुआ। ईसाई विद्यार्थी धार्मिक उलझनों पर विचार-विमर्श के लिए या क्वेकर पत्रिका *द फ्रेंड* पढ़ने के लिए आया करते थे तो छात्राएँ एक अधिक जानकार तथा अनुभवी, पर साथ ही अत्यंत सुहृद महिला से व्यक्तिगत सलाह तथा प्रेरणा लेने आती थीं। बांग्ला भाषा पर साइक्स का क्रमश: इतना अधिकार हो गया था कि कवि ने उनसे अपनी कुछ रचनाओं का अँग्रेज़ी में अनुवाद करने का आग्रह तक किया।

बेंटिक तथा शांति निकेतन के अतिरिक्त मार्जरी साइक्स ने चेन्नई के वीमॅन्स क्रिश्चियन कॉलेज, सेवाग्राम तथा कई अन्य संस्थानों में भी अध्यापन किया था। उनके कार्य, उनकी लिखी पुस्तकों तथा उनके बारे में इधर-उधर बिखरे लेखन से स्पष्ट समझ में आता है कि वे रवींद्रनाथ तथा गाँधी की विश्व दृष्टियों को समझना तथा संश्लेशित करना चाहती थीं, विशेषकर उनके शिक्षा संबंधी

परिप्रेक्ष्य को। उन्हें यह आंतरिक उत्साह तथा आविष्कार की यात्रा लगती थी। चूँकि यह यात्रा साइक्स की शिक्षा संबंधी दृष्टि को भी उजागर करती है इसलिए इससे फिर एक बार गुज़रना श्रेयस्कर ही होगा। साइक्स को 'वर्तमान के महातम

[10] हरिजन, 31 जुलाई 1937

[11] मार्था डार्ट, *मार्जरी साइक्स-क्वेकर गाँधियन*, पृ. 22

[12] मार्था डार्ट, 'मार्जरी साइक्स-1905-1995' जहाँगीर पी.पटेल तथा मार्जरी साइक्स, *गाँधी-हिज़ गिफ्ट ऑफ़ द फ़ाइट* (गोआ 1987) पृ. 21

पुरुषों में से इन दो'[13] के विचारों में कई अंतर दिखाई दिए, पर साथ ही कई समानताएँ भी दिखाई दीं जो आमतौर पर जीवनीकारों और इतिहासकारों की नज़र में नहीं आतीं। साइक्स के अनुसार इन दोनों की पृष्ठभूमि, मिजाज और उन बिंदुओं में अंतर था जिन पर वे बल देते थे। किंतु इनकी मनोवृत्ति और उद्देश्य में साम्य था। रवींद्रनाथ कृष्ण थे—कलाकार, सौंदर्य में निमग्न, जबकि गाँधीजी राम थे—योद्धा, ज़रूरतमंदों की सहायता को उजागर करना फिर भी दोनों में एक–दूसरे का भी कोई तत्व था। साइक्स का तर्क था कि दोनों ही अपने–अपने तरीके से समान लक्ष्यों के लिए काम कर रहे थे–आत्मनिर्भरता की गरिमा और उत्तरदायित्वपूर्ण स्वतंत्रता का आचरण। दोनों का महास्वप्न एक–सा ही था–मुक्त, निर्भय तथा पुनरुजीवित मानवता। उपनिषद्ों की परंपरा में वे बाह्य उपलब्धियों को तब तक निरर्थक मानते थे जब तक कि वे आंतरिक स्वाधीनता और आनंद की उपलब्धि में मानव की, स्थानीय समुदायों की, और संपूर्ण समाज की सहायता न करें। वे प्राय: *ईशोपनिषद्* की एक ऋचा पर लौटा करते थे जिससे साइक्स भी बहुत प्रभावित थीं–यह संपूर्ण विश्व परिधान है ईश्वर का त्यागकर इसका भोग करो पुन: ग्रहण करो ईश्वर के वरदान के रूप में।[14]

गाँधी और रवींद्रनाथ भोग और त्याग में द्वंद्व का संबंध मानते थे। प्रकाश और अंधकार की भाँति वे विरोधी पूरक थे जो एक–दूसरे को अर्थ देते थे। इन दोनों ही पुरुषों के जीवन का सिद्धांत वाक्य था 'त्यागकर भोग करो'[15]। यह संसार छोड़कर हिमालय की गुफ़ाओं में जा बसनेवाला त्याग नहीं था। इसके विपरीत इसका अर्थ था, 'मानव व्यापारों में एक अनासक्त और विलक्षण लिप्तता'[16] और इस कारण ये दोनों अपने कार्य और कला के माध्यम से समाज में लिप्त रहे, संस्थाएँ और आंदोलन संचालित किए और इन्होंने संवाद, वाद–विवाद तथा विचार–विमर्श आरंभ किए।

रवींद्रनाथ ठाकुर तथा गाँधीजी के शिक्षा संबंधी लक्ष्य और उनकी पद्धतियाँ इस विश्वदृष्टि से गहरे में अनुप्राणित थीं। वे बच्चों से प्यार करते थे और स्वयं 'चिर शिशु' थे। वे एक समग्र, समन्वित, बहुआयामी शिक्षा का स्वप्न देखते थे जिसमें हर बच्चे की वैयक्तिकता तथा प्रतिभा को पहचाना जाए और शिक्षा के एक मुक्त, आनंदमय वातावरण में उसे इस वैयक्तिकता तथा प्रतिभा को पूर्ण अभिव्यक्ति देने का अवसर मिले। उनका दृढ़ मत था कि शिक्षा को अत्याचार तथा अस्वाधीनता दूर करने में सहायक होना चाहिए। इसे हमें इतना समर्थ बनाना चाहिए कि हम सत्ता की केंद्रिकता तथा शोषण का प्रतिरोध कर सकें। इस काम को खेल की तरह लेना चाहिए और इसका ध्यान रचनात्मक कार्य पर केंद्रित होना चाहिए। इसे दैनिक जीवन के तत्वों तथा कार्यों का शिक्षण के संसाधनों के रूप में इस्तेमाल करना चाहिए। इस प्रकार कपास की खेती या बाउल संगीत शिक्षण–अधिगम की अनेक गतिविधियों के केंद्र बन

[13] मार्था डार्ट, *मार्जरी साइक्स–क्वेकर गाँधियन,* पृ. 23

[14] जहाँगीर पी.पटेल तथा मार्जरी साइक्स, *गाँधी–हिज़ गिफ्ट ऑफ़ द फ़ाइट* (गोआ 1987) पृ. 62

[15] वही, पृ. 63

[16] वही, पृ. 64

सकते हैं—वह विज्ञान के क्षेत्र में हो, या भूगोल, इतिहास और अर्थशास्त्र के क्षेत्र में, या कला, शिल्प या साहित्य के क्षेत्र में। शिक्षा को जहाँ वृहत्तर विश्व में प्रवेश की अनेक राहें खोलनी चाहिए, वहीं इसकी जड़ें स्थानीय आवश्यकताओं और संस्कृति में होनी चाहिए और कम-से-कम हाईस्कूल तक इसका माध्यम मातृभाषा होनी चाहिए। इस प्रकार साइक्स की दृष्टि में मूल तत्वों की दृष्टि से गाँव तथा शांति निकेतन उतने दूर नहीं थे जितना उन्हें समझा जाता है।

स्कूल और कॉलेज में सक्रिय अध्यापक के रूप में साइक्स इन विचारों को जीती रहीं। शांति निकेतन, सेवाग्राम तथा भारत के अन्य भी कई भिन्न-भिन्न इलाकों में इन्हें लागू करके वे इन्हें लगातार धार देती रहीं। अपने मार्गदर्शकों की ही तरह वे भी 'शिक्षा' तथा 'स्कूली पढ़ाई' में स्पष्ट अंतर करती थीं। वे इन दो शब्दों के आशय में इतना अंतर करती थीं मानो 'शिक्षा' का अर्थ दरअसल 'स्कूल से दूर जाना' किया जा सकता हो। साइक्स समझाती हैं कि शिक्षा (education) का शाब्दिक अर्थ ही 'बाहर ले चलना' है।

मेरे मन में चित्र उभरता है कि कोई किसी बच्चे के हाथ को हौले से थामकर बच्चे के अपने प्राकृतिकमनोवेगों से सहयोग करता हुआ नये विकास और नए उद्यम को प्रोत्साहित करते हुए उसके साथ-साथ उसी की स्वाभाविक रफ़्तार में चल रहा है। पर इसके विपरीत हम 'स्कूली पढ़ाई' शब्द का प्रयोग कुछ इस आशय में करते हैं मानो किसी का ऐसे काम के लिए अनुकूलन किया जा रहा हो जो वह स्वभावत: नहीं करता—उदाहरण के लिए बैले नृत्य की कुछ भंगिमाएँ और गतियाँ। मेरा यह दावा नहीं है कि शिक्षा और स्कूली पढ़ाई परस्पर विरोधी हैं (मैं यह नहीं कह रही हूँ कि दोनों साथ नहीं चल सकते। पर यह मैं कह रही हूँ वे भिन्न हैं और हम लोगों को इस भिन्नता को पहचानना चाहिए।[17]

साइक्स का दृढ़ विश्वास था कि अध्यापकों की पहली चिंता शिक्षा होनी चाहिए, स्कूली पढ़ाई नहीं। उन्होंने अध्यापक की तुलना माली (किंडरगार्टन का अर्थ ही है बच्चों की बगिया) या नर्स (स्कूल नर्सरियाँ/पौधशालाएँ ही तो हैं)। से की है जिनकी जिम्मेदारी बच्चों के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करना है। जिस प्रकार कोई कुशल माली अपने पौधों की या समझदार नर्स अपने रोगियों की देखभाल करते हैं उसी प्रकार बुद्धिमान अध्यापक को भी जानना चाहिए कि कब बच्चों को स्वयं उनके साथ छोड़ दिया जाए ताकि वे अपने विकास को जारी रख सकें, 'अपना मनभाता कर सकें' और अध्यापक पीछे हटकर केवल उन पर नज़र रखते रहें, 'उन्हें समझने के ख़्याल से, दखल देने के लिए नहीं'।[18] मगर जहाँ बच्चों को उनके काम में सहज सुविधा देने के लिए अध्यापकों को पीछे हट जाना चाहिए, वहीं उन्हें प्रश्न करने की आदत को सँवारने में विद्यार्थियों की मदद भी करनी चाहिए।

[17] कृष्ण कुमार (संपा.) *डेमोक्रेसी एंड एजुकेशन इन इंडिया* (नयी दिल्ली 1993), पृ. 24 में मार्जरी साइक्स का बीज भाषण।
[18] वही, पृ. 25

मानवों में यह आदत तो प्रकृति से ही आती है। अध्यापकों को स्वयं में भी जिज्ञासा का उत्साह जगाना चाहिए। बच्चों को समस्याएँ उठाने और समाधान ढूँढ़ने में मज़ा आता है और अध्यापकों को यह बात उनसे सीखनी चाहिए।

शिक्षक के तौर पर हम क्या बच्चों के सहज प्रश्नों का स्वागत करते हैं? अपने जीवन और कृतित्व के माध्यम से मार्जरी साइक्स ने इस बात पर फिर से बल दिया कि शिक्षा का अर्थ है, 'जो चीज़ें हमारे सामान्य स्वीकृत पैटर्न में नहीं बैठतीं'[19] उनके बारे में प्रश्न, समस्याएँ और संदेह उठाए जाएँ। शिक्षा बेजान तथ्यों का ढेर भर नहीं है; बल्कि हमें इसे 'चुनौती भरे प्रश्नों की शृंखला के प्रतिसाद'[20] के रूप में देखना चाहिए। अन्वेषण, बच्चों, लोगों, अनासक्त समाजलिप्तता, सौंदर्य आदि के प्रति उनके प्रेम ने और सबसे बढ़कर समानुभूति और मैत्री के उनके गुणों ने उन्हें देश के सर्वश्रेष्ठ शिक्षकों में स्थान दिलाया था। इसलिए शिक्षा संबंधी किसी भी चिंतन में उनका नाम हमेशा अनायास ही आ जाता है।

[19] वही, पृ. 27
[20] वही, पृ. 27